नई शिक्षा नीति और हिन्दी भाषा की उपयोगिता

शिक्षा की व्यवस्था हो चाहे व्यवस्था की शिक्षा दोनों की स्थिति में भाषा का महत्त्व सर्वविदित है। व्यावहारिक जीवन शैली हो चाहे अध्यनशीलता का ककहरा सीखना हो, भाषा के बिना सब व्यर्थ है। बिना भाषा के सीखे,समझें और जाने के कुछ भी सीखना असंभव है। बात जब ककहरे की हो तो मातृकुल परिवेश की भाषा यानी मातृभाषा का महत्व स्वीकारा गया हैं। भारतीय नवजागरण के अग्रदूत के रूप में प्रसिद्ध, आधुनिक काल के कवि भारतेंदु हरिश्चंद ने निज भाषा का महत्त्व बताते हुए लिखा भी हैं कि 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिन निज भाषा-ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।' इस के साथ भारत की निज भाषा से भारतेन्दु जी का तात्पर्य हिन्दी सहित भारतीय भाषाओँ से रहा हैं। वे आगे लिखते भी है कि ;अंग्रेज़ी पढ़ि के जदपि, सब गुन होत प्रवीन। पै निज भाषाज्ञान बिन, रहत हीन के हीन।।' यानि अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषाओँ में प्राप्त शिक्षा से आप प्रवीण तो हो जाओगे किन्तु सांस्कृतिक एवं व्यावहारिक दृष्टिकोण से हीन ही रहोगे। उसी काल में भारतेन्दु जी ने मातृभाषा में शिक्षा की अवधारणा को भी साकार करने का अनुग्रह किया हैं। इसी कविता में वे फिर लिखते है कि 'और एक अति लाभ यह, या में प्रगट लखात। निज भाषा में कीजिए, जो विद्या की बात।।'

इसी तरह भारत के सांस्कृतिक और सामाजिक वैभव की स्थापना का प्रथम पायदान निज भाषा यानी मातृभाषा में शिक्षा में ही निहित हैं। बिना मातृभाषा के ज्ञान और अध्ययन के सब व्यवहार व्यर्थ ही माने गए हैं।

कुछ वर्षों पूर्व एक प्रबंधन संस्थान में एक युवा प्रशिक्षणार्थी आत्महत्या कर लेता है, वह इसका कारण लिखकर छोड़ जाता है कि कमजोर अंग्रेजी के कारण उसे हास्यास्पद स्थितियों से गुजरना पड़ रहा था, जो असहनीय हो गया था। ऐसी ही एक अन्य घटना में विद्यार्थी इसी कारण से तीन महीने तक विद्यालय नहीं जाता है। घर पर सब अनभिज्ञ हैं और जानकारी तब होती है जब वह गायब हो जाता है। ऐसी खबरें अगले दिन सामान्यत : भुला दी जाती हैं। प्राय: एक दिन की अख़बार की सुर्खियाँ भारत के शिक्षा नीति निर्धारकों को सोचने-समझने पर विवश कर देती है कि आख़िर भारत में ही अपने राष्ट्र की प्रतिनिधि भाषा जानने समझने के बावजूद अंग्रेजी का इतना दबाव क्यों है जो व्यक्ति को अवसादग्रस्त तो कर ही रहा है साथ-साथ जीवन की बाज़ी लगाने के लिए भी विवश कर रहा हैं। इस प्रकार का चिंतन-विश्लेषण कहीं पर भी सुनाई नहीं पड़ता है कि आज भी अंग्रेजी भाषा का दबाव किस कदर भारत की नई पीढ़ी को प्रताड़ित कर रहा है। सच तो यह है कि आजादी के बाद मातृभाषा हिंदी और अन्य

भारतीय भाषाओं के उत्थान का जो सपना देखा गया था अब वह सपना दस्तावेजों, कार्यक्रमों तथा संस्थाओं में दबकर रह गया है। कुछ दु :खांत घटनाएं संचार माध्यमों में जगह पा जाती हैं। समस्या का स्वरूप अनेक प्रकार से चिंताग्रस्त करने वाला है।

आजादी के बाद के पहले दो दशकों में पूरी आशा थी कि अंग्रेजी का वर्चस्व कम होगा। हिंदी के विरोध के कारण सरकारें सशंकित हुई जिसका खामियाजा दूसरी भारतीय भाषाओं को भुगतना पड़ रहा है। तीन-चार दशक तो इसी में बीते कि अंग्रेजी में प्रति वर्ष करोड़ों बच्चे हाईस्कूल परीक्षा में फेल होते रहे। किन्तु वर्तमान पर नज़र डालें तो ठीक विपरीत परिणामों का दर्शन होता है। हाल ही में उत्तरप्रदेश में लगभग आठ लाख बच्चें हिन्दी भाषा में अनुतीर्ण हो जाते हैं। मतलब साफ तौर पर नीति निर्धारकों द्वारा जिस तरह से अंग्रेजी की गुलामी वाला शिक्षा मसौदा बनाया वह हिन्दी के लिए ही आत्मघाती बन गया। देश में लाखों ऐसे स्कूल हैं जहां केवल एक मानदेय प्राप्त अध्यापक कक्षा एक से पांच तक के सारे विषय पढ़ाता है। क्या ये बच्चे कभी उनके साथ प्रतिस्पर्धा में बराबरी से खड़े हो पाएंगे जो देश के प्रतिष्ठित स्कूलों में अंग्रेजी माध्यम से पढ़ाई कर रहे हैं ? आज उपलब्धियों के बड़े आंकड़े सामने आते हैं कि 21 करोड़ बच्चे स्कूल जा रहे हैं, 15 करोड़ मध्याह्न भोजन व्यवस्था से लाभान्वित हो रहे हैं, स्कूलों की उपलब्धता लगभग 98 प्रतिशत के लिए एक किलोमीटर के दायरे में उपलब्ध है आदि। यही नहीं, अधिकांश राज्य सरकारें अंग्रेजी पढ़ाने की व्यवस्था कक्षा एक या दो से कर चुकी हैं और इसे बड़ी उपलब्धि के रूप में गिनाती भी हैं। आज अगर भारत के युवाओं से पूछें तो वे भी यही कहेंगे- अगर उनकी अंग्रेजी अच्छी होती या फिर वे किसी कान्वेंट या पब्लिक स्कूल में पढ़े होते तो जीवन सफल हो जाता।

मातृभाषा से बच्चों का परिचय घर और परिवेश से ही शुरू हो जाता है। इस भाषा में बातचीत करने और चीज़ों को समझने-समझाने की क्षमता के साथ बच्चे विद्यालय में दाख़िल होते हैं। अगर उनकी इस क्षमता का इस्तेमाल पढ़ाई के माध्यम के रूप में मातृभाषा का चुनाव करके किया जाये तो इसके सकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं। यूनेस्को द्वारा भाषायी विविधता को बढ़ावा देने और उनके संरक्षण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस की शुरूआत भी की गई। हम अक्सर देखते हैं कि बहुत सी बातें अवधी, भोजपुरी, ब्रजभाषा, मगही, मराठी, कोंकणी, बागड़ी और मालवी, निमाड़ी आदि भाषाओं (अथवा बोलियों) में कही जाती हैं उनका व्यापक असर होता है।

कई बार मातृभाषा को हतोत्साहित करने की प्रवृत्ति विद्यालयों में देखी जाती है। जैसे हिंदी बोलने में इंग्लिश माध्यम विद्यालयों में दण्ड लगने वाली घटनाओं के बारे में हमने सुना है। ऐसे ही निमाड़ी या अन्य मातृभाषाओं के गीतों को स्कूलों में गाने से बच्चों को हतोत्साहित किया जाता है, इसका अर्थ है कि हम बच्चों को उनके अपने परिवेश, संस्कृति और उनकी जड़ों से काट देना चाहते है। यह प्रक्रिया बड़ी चालाकी के साथ बचपन से ही शुरू हो जाती है और एक दिन हमें अहसास होता है कि हम अपनी ही जड़ों से अज़नबी हो गये हैं। इससे बचने का एक ही तरीका है कि हम मातृभाषा में संवाद, चिंतन और विचार-विमर्श को अपने रोज़मर्रा की ज़िदगी में शामिल करें। इसके इस्तेमाल को लेकर किसी भी तरह की हीनभावना का शिकार होने की बजाय ऐसा करने को प्रोत्साहित करें।

हालांकि भारत की पहली शिक्षा नीति में भी त्रिभाषा में शिक्षा व्यवस्था की परिकल्पना दौलत सिंह

कोठारी आयोग ने रखी थी, कतिपय राजनैतिक कारणों से पहली शिक्षा नीति भी न तो त्रिभाषा फार्मूला और न ही मातृभाषा में अनिवार्य शिक्षा का मसौदा अपना पाई किन्तु वर्षों की तपस्या और माँग अनुरूप वर्ष 2020 में जारी शिक्षा नीति ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी एवं शिक्षा मंत्री या कहें मानव संसाधन विकास मंत्री रमेश चंद्र पोखरियाल निशंक द्वारा प्राथमिकी शिक्षा में मातृभाषा की अनिवार्यता को अपना कर भारत भर में निज भाषा में शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित किया है।

नई शिक्षा नीति में जिस तरह से प्राथमिक तौर पर मातृभाषा के प्रभाव को समायोजित करते हुए हिन्दी भाषा के महत्व को भी सम्मिलित किया हैं वह हिन्दी के प्रभुत्व को स्थापित करते हुए भविष्य में हिन्दी युग की स्थापना का कारक बनेगा। हिन्दी के साथ-साथ भारतीय भाषाओँ का भी महत्त्व बने और अंग्रेजी का आधिपत्य समाप्त हो यही मूल ध्येय है। हिन्दी युग का आरंभ तभी माना जाएगा जब बाजार हिन्दी भाषा सहित भारतीय भाषाओँ को अपनाएगा। भाषा जबतक बाजार अपनाता नहीं तब तक भाषा का विकास खोखला है। उदहारण के लिए चीन को देखें, चाइनीज भाषा को स्थानीय बाजार ने अपना रखा है, वे अपना कार्यव्यवहार चाइनीज भाषा में करते है तो उनका सांस्कृतिक ढाँचा भी सुरक्षित है और भाषा का महत्त्व भी स्थापित है। ऐसे ही भारतीय बाजार को हिन्दी भाषा को स्वीकारना होगा, क्योंकि भारत भी विश्व का दूसरा बड़ा बाजार है।

आधुनिकीकरण की भ्रमपूर्ण व्याख्याओं के कारण हमारी नई पीढ़ी में धुरीहीनता आ रही है। वह न तो परंपरा से पोषण पा रही है और न ही उसमें पश्चिम की सांस्कृतिक विशेषताएं नजर आ रही हैं। मातृभाषा में शिक्षण के साथ अनेक अन्य आवश्यकताएं भी हैं जो हर भारतीय को भारत से जोड़ने और विश्व को समझने में सक्षम होने के लिए आवश्यक हैं। मातृभाषा का इसमें अप्रतिम महत्व है, इससे इनकार बेमानी होगा। ऐसे में शिक्षा में राजनीतिक लाभ को ध्यान में रखकर बदलाव करने के स्थान पर शैक्षणिक दृष्टिकोण से आवश्यक बदलाव लाना आज की परिस्थिति में सबसे सराहनीय कदम होगा। भारत जैसे लोकतान्त्रिक देश में हिन्दी का पर्याप्त प्रचार एवं बाजार आधारित शिक्षा व्यवस्था की अनुपालना अनिवार्यत: होना चाहिए, इसी के सहारे भारत का लोकतान्त्रिक और सांस्कृतिक विकास सम्भव हैं।

डॉ अर्पण जैन 'अविचल'

पत्रकार एवं स्तंभकार

इंदौर

संपर्क: 09893877455

अणुडाक : arpan455@gmail.com

अंतरताना :www.arpanjain.com
[लेखक डॉ. अर्पण जैन 'अविचल' मातृभाषा उन्नयन संस्थान के राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं तथा देश में हिन्दी भाषा के प्रचार हेतु हस्ताक्षर बदलो अभियान,भाषा समन्वय आदि का संचालन कर रहे हैं]